आंतरविद्याशाखीय बहुभाषिक शोध पत्रिका

विद्यावार्ता™

संपादक मंडल

मुख्य संपादक

प्रा.बहिरम देवेंद्र (हिंदी) डॉ. योगिता रांधवणे (मराठी)

सहायक संपादक

प्रा.नारायण हिरडे डॉ. राजेंद्र ठाकरे

डॉ. नीतिन थोरात प्रा. बापु देवकर

Reg.No.U74120 MH2013 PTC 251205

Harshwardhan Publication Pvt.Ltd.

At.Post.Limbaganesh,Tq.Dist.Beed

Pin-431126 (Maharashtra) Cell:07588057695,09850203295

harshwardhanpubli@gmail.com, vaidyawarta@gmail.com

All Types Educational & Reference Book Publisher & Distributors

CamScanner

88

"हिंदी संत साहित्य की प्रासंगिकता"

(विशेष संदर्भ– संत कबीर)

प्रा. रोहिणी रामचंद्र साळवे
एम.ए., बी.एड, एम. फिल, सेट (हिंदी)
दादा पाटील महाविद्यालय, कर्जत.

प्रत्येक गुण की कुछ विशेषताएं होती है और वह विशेषताएँ समाप्त होते ही उस युग की साहित्यिक कृतियां भी अप्रासंगिक हो जाती हैं। किंतु कुछ कृतियां अपनी आंतरिक समृध्दि और अभिव्यक्ति सामर्थ्य में इतनी महान होती है कि प्रत्येक युग में अपनी प्रासंगिकता को सिध्द कर देती है। ऐसा साहित्य हर एक काल पर विजय पाते हुए कालजयी बन जाता है। संत साहित्य में संत कबीर,संत तुलसीदास, सूरदास, संत मीराबाई, संत ज्ञानेश्वर, संत तुकाराम, संत नामदेव, संत एकनाथ आदि संत साहित्यकार आते है। उनकी कृतियों में हर एक युग का व्यक्ति अपनी समकालीन मानसिकता और परिवेश को उनके साहित्य में देख लेता है। संत साहित्य का आरंभ भारत में बारहवीं शताब्दी के आसपास माना जाता है। संत नामदेव की रचनाओं का संबंध मराठी और हिंदी दोनों ही भाषाओं में उपलब्ध है। इन्हें संत संप्रदाय की पृष्ठभूमि तैयार करणे का श्रेय दिया जाता है। संत नामदेव भारतीय संत परंपरा के अनुरूप ईश्वर को जीवों का तारनहार मानते हुए लिखते हैं

"तारिले गनिका बिन सूप कुब्जा
विआक अजामिलु तारिअले"

हिंदी साहित्य के इतिहास में द्वितीय चरण भक्तिकाल के नाम से जाना जाता है। आ. रामचंद्र शुक्ल संवत १३७५ वि. से. संवत १७०० वि. तक के कालखण्ड को भक्तिकाल मानते है। इस काल में भक्ति भाव की प्रधानता दिखाई देती है। भक्तिकाल को दो भागों में विभक्त किया है– निर्गुण धारा एवं सगुण धारा। निर्गुण धारा के अंतर्गत ज्ञानाश्रयी शाखा एवं प्रेमाश्रयी शाखा हैं। सगुण धारा के अंतर्गत रामकाव्य एवं कृष्णकाव्य हैं। ज्ञानाश्रयी शाखा के कवियों को संत कवि कहा जाता है तथा इस शाखा के प्रतिनिधी कवि हैं– संत कबीर

परमात्मा को जब सर्वव्यापी, निराकार, सुक्ष्म मानकर उसकी उपासना की जाती है, तब उसे निर्गुण ब्रम्ह कहा जाता है। संत कबीर द्वारा ईश्वर को निर्गुण निराकार मानकर उसके सगुण साकार रूप को अस्विकार किया गया है। संतो ने संपूर्ण भारतीय समाज को एकता के सूत्र में बांधने का महत्वपूर्ण काम किया दिखाई देता हैं। अनेक संत मानवता के उदात्त मूल्यों की स्थापना में लगे हुए थे। संत कबीर मूर्तिपूजा का विरोध कर समाज–सुधार की ओर विशेष ध्याने देते हुए पाखण्ड, अंधविश्वास, हिंसा और दुराचार के प्रति आक्रोश व्यक्त करते है। उनका दृष्टिकोण क्रांतिकारी एवं प्रगतिशील था। वे वर्णाश्रम व्यवस्था के विरोधी थे और जाति–पांति, उंच–नीच का भेद नहीं मानते थे। कबीर का जन्मकाल १३९८ से १५१८ ई. माना जाता है, परंतु इक्कीसवी सदी में भी उनका साहित्य प्रासंगिक दिखाई देता है।

CamScanner

संत कबीर प्रभावशाली उपदेशक तथा क्रांतीकारी युग दृष्टा साबित हुए। उनका संपूर्ण साहित्य विचारों की भव्यता से परिपूर्ण है। धार्मिक आडंबर, भेदभाव आदि का विरोध उनके साहित्य में हुआ है और यही कारण है कि उनका काव्य हर काल में प्रासंगिक है। कबीर के काव्य की प्रासंगिकता निम्न रूप में बताने का प्रयास किया है.

१) आचारण की शुध्दता—

संत कबीर आचरण की शुध्दता के लिए कुसंग का त्याग करने पर बल देते हैं। कबीर का मत है कि जब तक मन में काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, ईर्ष्या–द्वेष आदि विकार भरे हैं, तब–तक हृदय में भक्ति का निर्माण नहीं हो सकता। भक्ति मार्ग पर चलनेवाले व्यक्ति को अहंकार का परित्याग करना पडता है। 'मैं' का भाव ही अहंकार है, 'मैं' के समाप्त होने पर ही 'तू' अर्थात परमात्मा की प्राप्ति हो पाती है–

"जब मैं था तब हरि नाही, अब हरि है मैं नाही।
सब अंधियारा मिटि गया, दीपक देख्या माहि।।"

२) मूर्ति–पूजा का विरोध–

कबीर मूर्ति–पूजा के पागलपन पन प्रहार करते हुए कहते हैं कि इन मूर्तियों में देवता होता तो वह स्वयं को मूर्तिभंजको से बचा लेता, इसलिए इन मूर्तियों को पूजना छोड दो और कर्म की पूजा करों। अच्छा होगा कि तुम उस चक्की को पूजो, जिसका पिसा आटा तुम्हारा पेट भरता है–

"पाथर पूजें हरि मिलें, तो मैं पूजूं पहार।
घर की चाकी कोई न पूजे, पीस खाय संसार।।"

३) हिंसा का विरोध–

कबीर अपने काल में धर्म के नाम पर व्याप्त हिंसा का विरोध करते है, जो आज के युग में भी प्रासंगिक है–

"दिन में रोजा रहत हैं, राति हनत है गाय।
यह तो खून वह बंदिगी, कैसे खुशी खुदाय।।"

इसके आगे कबीर कहते हैं, लोगों को समझाना चाहिए कि बकरी केवल घास–पात खाती है और इस पाप के कारण उसकी खाल खींची जाती है किंतु जो व्यक्ति बकरी खाते हैं, उनकी क्या दशा होगी–

"बकरी पाती खात है, ताकी काढी खाल।
जे नर बकरी खात हैं, तिनके कौन हवाल।।"

४) नीति उपदेश–

कबीर मनुष्य को आचरण के साथ सत्संगति और प्राणीमात्र पर दया करने का उपदेश करते है। कबीर मांगने की वृत्ति का विरोध करते दिखाई देते है

"मांगन मरन समान है, मत कोई मांगो भीख।
मांगन ते मरना भला, ये सतगुरु की सीख।।"

५) ज्ञान की व्यापक परिभाषा –

कबीर की भक्ती ही ज्ञानाश्रय पर आधारित है। कबीर का ज्ञान प्रेम–भक्ति का समन्वित रूप है। कबीर ज्ञान के माध्यम से ही धर्म और बाहयंडबरों पर प्रहार करते है। कबीर के साहित्य में ज्ञान की व्यापक परिभाषा दिखाई देती है–

"पोथी पढि पढि मुआ, पंडित भया न कोय।
ढाई आंखर प्रेम का, पढैं सो पंडित होय।।"

६) समानता का तत्व–

MAH MUL/03051/2012 ISSN: 2319 9318 UGC Approved Sr.No. 62759 Vidywarta® February 2018 Special Issue

आज भी समाज में उंच-नीच तथा जाति–पाती का शोर दिखाई देता है। कबीर अपने भक्ति साहित्य द्वारा ऐसा राजमार्ग तैयार करते दिखाई देते है, जिसपर ऊंच–नीच, ब्राम्हण–शुद्र, स्पृश्य–अस्पृश्य का कोई स्थान नहीं, वह सभी के लिए समान हैं।

"जाति–पांति पूछे नहीं कोई, हरि को भजे सो हरि का होई।"

इस प्रकार संक्षेप में कहा जायेगा कि कबीर का साहित्य अपने व्यापक अनुभव से निर्माण था। समाज में व्याप्त बाहयांडंबर, रूढियां, कर्मकांड, जातीभेद साम्प्रदायिकता आदि का विरोध उन्होंने अपने काल में किया, जो आज भी प्रसंगानुरूप है। उन्होंने कर्म, अहिंसा, प्रेम आदि का प्रचार अपने साहित्य के माध्यम से किया। सर्व धर्म समभाव, प्राणिमात्रा पर दया आदि कबीर के मूलमंत्र थे, जिनकी उपायदेयता आज के समाज के लिए भी लागु होती है। उनकी भक्तिभावना में प्रगतिवादी विचारधारा का दर्शन होता है, जो सदैव प्रासंगिक रहेगी। संत कबीर अपने हृदय में अमिट प्रेम को भरकर उस निर्गुण, निराकार ईश्वर के पास जीव की भलाई की कामना करते हुए लिखते है–

"कबीर खडा बाजार में, सबकी मांगे खैर।
ना काहूं से दोस्ती, ना काहू से बैर।।"

इस प्रकार संत कबीर महान तत्ववेत्ता तथा मानवतावादी कवि के रूप में आज भी पाठकों के हृदय में स्थान पाते दिखाई देते हैं और यही भावना साबित करती हैं। इसप्रकार संत कबीर हर युग में प्रासंगिक रहे है और भविष्य में भी उनके विचार प्रासंगिक ही होगें इसमें दो राय नहीं।

संदर्भ –

१) हिंदी साहित्य युग और प्रवृत्तियां–डॉ. शिवकुमार शर्मा

२) हिंदी साहित्य की प्रवृत्तियां–डॉ. जयकिशनप्रसाद खण्डेलवाल

३) सुधमती–नवम्बर, २०१५, संपा. रोहित गुप्ता

४) कबीर ग्रंथावली–संपा. श्यामसुंदरदास